

११. अभिमानस्याख्यानम्

विशुद्धकेवलज्ञानं नत्वा श्रीमज्जिनेश्वरम्। बहुमानकथां वच्मि सारशर्मप्रदायिनीं ॥१॥
 काशीदेशे सुविख्याते जातो वाराणसीपुरे। राजा वृषध्वजो धीमान्स्वप्रजाप्रतिपालकः ॥२॥
 वसुमत्यभिधा तस्य महादेवी बभूव च। रूपलावण्यसौभाग्यमण्डिता पूर्वपुण्यतः ॥३॥
 तथा गंगानदीतीरे पलासग्रामवासकः। नाम्नाशोकोभवद्भीमान्महागोकुलिकस्तदा ॥४॥
 ददात्यसौ नरेन्द्राय तस्मै संवत्सरं प्रति। सद्घृतैः पूर्णकुंभानां सहस्रं करमुत्तमम् ॥५॥
 तस्य भार्याभवन्नन्दा सती वन्ध्या स्वकर्मतः। साशोकाय सुधीर्भार्या रोचते नैव मानसे ॥६॥
 रूपशीलादियुक्तापि कामिनी पुत्रवर्जिता। पुंसश्चित्ते समायाति नैव वल्लीव निष्फला ॥७॥
 अशोकस्तु तदा सोपि सुधीर्गोकुलिको महान्। पुत्रार्थं कामिनीमन्यां सुनन्दां परिणीतवान् ॥८॥
 तयोश्च कलहे जाते स्त्रियोस्तेन च धीमता। अर्द्धमर्द्धं विधायोच्चैर्दत्तं सर्वं गृहादिकम् ॥९॥
 नन्दा नित्यं विशुद्ध्यादि-भाजनादिप्रयत्नकम्। दानमानादिसत्पूजां गोपालानां विधाय च ॥१०॥

११. अभिमान करने वाली की कथा

निर्मल केवलज्ञान धारी जिन भगवान् को नमस्कार का मान करने से बुरा फल प्राप्त करने वाले की कथा लिखी जाती है। इस कथा को सुनकर जो लोग मान के छोड़ने का यत्न करेंगे वे सुख लाभ करेंगे ॥१॥

बनारस के राजा वृषध्वज प्रजा का हित चाहने वाले और बड़े बुद्धिमान् थे। इनकी रानी का नाम वसुमती था। वसुमती बड़ी सुन्दर थी। राजा का उस पर अत्यन्त प्रेम था ॥२-३॥

गंगा के किनारे पर पलास नाम का एक गाँव बसा हुआ था। उसमें अशोक नाम का एक ग्वाला रहता था। वह ग्वाला राजा को गाँव के लगान में कोई एक हजार घी के भरे घड़े दिया करता था। उसकी स्त्री नन्दा पर इसका प्रेम न था। इसलिए कि वह बाँझ थी और यह सच है, सुन्दर या गुणवान् स्त्री भी बिना पुत्र के शोभा नहीं पाती है और न उस पर पति का पूरा प्रेम होता है। वह फल रहित लता की तरह निष्फल समझी जाती है। अपनी पहली स्त्री को निःसन्तान देखकर अशोक ग्वाले ने एक और ब्याह कर लिया। इस नई स्त्री का नाम सुनन्दा था। कुछ दिनों तक तो इन दोनों सौतों में लोक-लाज से पटती रही, पर जब बहुत ही लड़ाई-झगड़ा होने लगा तब अशोक ने इनसे तंग आकर अपनी जितनी धन-सम्पत्ति थी उसे दोनों के लिए आधी-आधी बाँट दिया। नन्दा को अलग घर में रहना पड़ा और सुनन्दा अशोक के पास ही रही। नन्दा में एक बात बड़ी अच्छी थी वह एक तो समझदार थी। दूसरे वह अपने दूध दुहने के लिए बरतन वगैरह को बड़ा साफ रखती। उसे सफाई बड़ी पसन्द थी। इसके सिवा वह अपने नौकर ग्वाले पर बड़ा प्रेम करती। उन्हें अपना नौकर न समझ अपने कुटुम्ब की तरह मानती। वह उनका बड़ा आदर-सत्कार करती। उन्हें हर एक त्यौहारों के मौकों पर दान-मानादि से बड़ा

घृतकुंभसहस्राब्द्धं कृत्वा संवत्सरं प्रति। ददाति स्म स्वनाथाय राजदेयं गुणोज्ज्वला ॥११॥
 सुनन्दा च स्वरूपादि-महागर्वेण दूषिता। गोपालानां कुधीः पूजां नैव यत्नं करोति च ॥१२॥
 तस्या गोपालकाः सर्वे स्वयं दुग्धं पिबन्ति च। तस्मात्तस्य घृतं जातं प्रमादादतितुच्छकम् ॥१३॥
 नन्दयान्यघृतं चापि दत्तं गोकुलिकेन तु। निर्घाटिता सुनन्दा सा सौभाग्येन प्रगर्विता ॥१४॥
 नन्दा नन्दप्रदा सा च स्वपुण्येन तदा सती। स्वगेहे सर्ववित्तादौ सुप्रधानाभवच्छुभा ॥१५॥
 एवं मुन्यादिभिर्जैनधर्मकर्मणि शर्मदम्। पूजादानादिकं कार्यं नित्यं सद्बोधसिद्ध्ये ॥१६॥
 श्रीमज्जैनपदाम्बुजेऽत्र नितरां स्वमोक्षसौख्यप्रदे शास्त्रे श्रीजिनभाषिते शुभतरे धर्मे गुरौ सज्जने।
 ये यच्छन्ति विशुद्धभक्तिभरतः सद्भूरिमानादिकं तेषां सारयशः सुबोधविलसच्छ्रीशर्म नित्यं भवेत् ॥१७॥

इति कथाकोशे बहुमानाख्यानं समाप्तम्।

खुश रखती। इसलिए वे ग्वाले लोग भी उसे बहुत चाहते थे और उनके कामों को अपना ही समझ कर किया करते थे। जब वर्ष पूरा होता तो नन्दा राज लगान के हजार घी के घड़ों से अपना आधा हिस्सा पाँच सौ घड़े अपने स्वामी को प्रतिवर्ष दे दिया करती थी। पर सुनन्दा में ये सब बातें न थीं। उसे अपनी सुन्दरता का बड़ा अभिमान था। इसके सिवा यह बड़ी शौकीन थी। साज-सिंगार में ही उसका सब समय चला जाता था। वह अपने हाथों से कोई काम करना पसन्द न करती थी। सब नौकर-चाकरों द्वारा ही होता था। इस पर भी उसका अपने नौकरों के साथ अच्छा बरताव न था। सदा उनके साथ वह माथा-फोड़ी किया करती थी। किसी का अपमान करती, किसी को गालियाँ देती और किसी को भला-बुरा कहकर झिटकारती। न वह उन्हें कभी त्यौहारों पर कुछ देकर प्रसन्न करती। गर्ज यह कि सब नौकर-चाकर उससे प्रसन्न न थे। जहाँ तक उनका बस चलता वे भी सुनन्दा को हानि पहुँचाने का यत्न करते थे। यहाँ तक कि वे जो गायों को चराने जंगल में ले जाते, वहाँ उनका दूध दुह कर पी लिया करते थे। इससे सुनन्दा के यहाँ पहले वर्ष में ही घी बहुत थोड़ा हुआ। वह राज लगान का अपना आधा हिस्सा भी न दे सकी। उसके इस आधे हिस्से को भी बेचारी नन्दा ने ही चुकाया। सुनन्दा की यह दशा देख कर अशोक ने घर से निकाल बाहर की। नन्दा को अपना गया अधिकार प्राप्त हुआ। पुण्य से वह अशोक की प्रेमपात्र हुई। घर बार, धन-दौलत की वह मालकिन हुई जिस प्रकार नन्दा अपने घर गृहस्थी के कामों को अच्छी तरह चलाने के लिए सदा दान-मानादि किया करती उसी प्रकार अपने पारमार्थिक कामों के लिए भव्यजनों को भी अभिमान रहित होकर जैनधर्म की उन्नति के कार्यों में दान-मानादि करते रहना चाहिए। उससे वे सुखी होंगे और सम्यग्ज्ञान लाभ करेंगे। जो स्वर्ग-मोक्ष का सुख देने वाले जिन भगवान् को बड़ी भक्ति से पूजा-प्रभावना करते हैं, भगवान् के उपदेश किए शास्त्रों के अनुसार चल उनका सत्कार करते हैं, पवित्र जैनधर्म पर श्रद्धा-विश्वास करते हैं और सज्जन धर्मात्माओं का आदर सत्कार करते हैं वे संसार में सर्वोच्च यश लाभ करते हैं और अन्त में कर्मों का नाश कर परम पवित्र केवलज्ञान-कभी नाश न होने वाला सुख प्राप्त करते हैं ॥४-१७॥

९२. अनिहववाख्यानम्

यस्य सत्केवलज्ञाने भाति विश्वमणूपमम्। तं जिनेन्द्रं प्रणम्योच्चै-रनिहवकथां ब्रुवे ॥१॥
 अवन्तिविषये श्रीमानुज्जयिन्यां विचक्षणः। राजाभूद्धृतिषेणाख्यस्तद्राज्ञी मलयावती ॥२॥
 चण्डप्रद्योतनः पुत्रस्तयोर्जातो गुणोज्ज्वलः। रूपलावण्यसौभाग्यमण्डितः पूर्वपुण्यतः ॥३॥
 दक्षिणादिपथे वेनातटाख्ये नगरे तथा। ब्राह्मणः सोमशर्माभूत्सोमाख्या ब्राह्मणी तयोः ॥४॥
 सुपुत्रः कालसंदीवः सर्वविद्याविराजितः। उज्जयिन्यां समागत्य स श्रीसोमसुतो महान् ॥५॥
 चण्डप्रद्योतनं चारुलिपीश्चाष्टादशोत्तमाः। पाठयामास पूतात्मा कालसंदीववाक् सुधीः ॥६॥
 एकां म्लेच्छलिपिं तेन तं सुपाठयता तथा। कूटं पठन्प्रभोः पुत्रो हतः पादेन सोवदत् ॥७॥
 यदाहं संभविष्यामि भूपतिस्तु तदा तव। पादं संखण्डयिष्यामि युक्तं स्वल्पमतिः शिशुः ॥८॥
 ततस्तं पाठयित्वासौ कालसंदीवको द्विजः। गत्वा दक्षिणदेशं च मुनिर्जातो गुणोज्ज्वलः ॥९॥

९२. निहव-असल बात को छुपाने वाले की कथा

जिनके सर्व-श्रेष्ठ ज्ञान में यह सारा संसार परमाणु के समान देख पड़ता है, उन सर्वज्ञ भगवान् को नमस्कार कर निहव-जिस प्रकार जो बात हो उसे उसी प्रकार न कहना, उसे छुपाना, इस सम्बन्ध की कथा लिखी जाती है ॥१-२॥

उज्जैन के राजा धृतिषेण की रानी मलयावती के चण्डप्रद्योत नाम का एक पुत्र था। वह जैसा सुन्दर था वैसा ही गुणवान् भी था। पुण्य के उदय से उसे सभी सुख सामग्री प्राप्त थी ॥३॥

एक बार दक्षिण देश के वेनातट नगर में रहने वाले सोमशर्मा ब्राह्मण का कालसंदीव नाम का विद्वान् पुत्र उज्जैन में आया। वह कई भाषाओं का जानने वाला था। इसलिए धृतिषेण ने चण्डप्रद्योत को पढ़ाने के लिए उसे रख लिया। कालसंदीव ने चण्डप्रद्योत को कई भाषाओं का ज्ञान कराने के बाद एक म्लेच्छ-अनार्यभाषा को पढ़ाना शुरू किया। इस भाषा का उच्चारण बड़ा ही कठिन था। राजकुमार को उसके पढ़ने में बहुत दिक्कत पड़ा करती थी। एक दिन कोई ऐसा ही पाठ आया, जिसका उच्चारण बहुत क्लिष्ट था। राजकुमार से उसका ठीक-ठीक उच्चारण न बन सका। कालसंदीव ने उसे शुद्ध उच्चारण कराने की बहुत कोशिश की, पर उसे सफलता प्राप्त न हुई इससे कालसंदीव को कुछ गुस्सा आ गया। गुस्से में आकर उसने राजकुमार के एक लात मार दी। चण्डप्रद्योत था तो राजकुमार ही सो उसका भी कुछ मिजाज बिगड़ गया। उसने अपने गुरु महाराज से तब कहा-अच्छा महाराज, आपने जो मुझे मारा है, मैं भी इसका बदला लिए बिना न छोड़ूँगा। मुझे आप राजा होने दीजिये, फिर देखिएगा कि मैं भी आपके इसी पाँव को काटकर ही रहूँगा। सच है, बालक कम-बुद्धि हुआ ही करते हैं। कालसंदीव कुछ दिनों तक और यहाँ रहा, फिर वह यहाँ से दक्षिण की ओर चला गया। उधर कालसंदीव को एक दिन किसी मुनि का उपदेश सुनने का मौका मिला। उपदेश सुनकर उसे बड़ा वैराग्य हुआ। वह मुनि हो गया ॥४-९॥